देवबणी री बात

कृपाविस का सामुदायिक जंगल 'देवबणी/ओरण' संरक्षण अभियान

अंक 9 अप्रेल 2008

ओरण – देवबणी व्यवस्था आठ शताब्दियों की खरी आस्था

सामलती भू प्रबंधन, ओरणों तथा ग्राम पंचायत व्यवस्था के बनने की शुरूआत मुगल साम्राज्य से पूर्व 13वीं–14वीं शताब्दी में हुई। उस समय पंचायते मुख्यतया कानून व्यवस्था तथा आपसी लडाई झगडे जो सामलाती भूमि से सम्बंधित थे, को निपटाने में मुख्य भुमिका निभाती थी। जैसे ही मुगल साम्राज्य का अन्त हुआ जमीन से सम्बंधित कानून, टैक्स व कानूनी अधिकार आदि बनाये जाने लगे तथा सामलाती जमीन जो लोगो के हाथ में थी वह केन्द्रीय व्यवस्था के हाथों में चली गई। लेकिन इस दौर में भी बहुत सारे पुराने ग्राम्य संगठन किसी न किसी रूप में जिदां रहे। पंचायतें भी ग्रामीण क्षेत्रों में बरकरार रही तथा इसी तरह ओरण भी अपनी जगहों पर बचें रहे।

जैसे ही ब्रिटिश साम्राज्य लगभग 18 वीं से 21वीं शताब्दी में अपने वर्चस्व में था उस दौर में संसाधनो व व्यापार पर एकाधिकार शुरू हो गया। जिसके कारण व्यापक स्तर पर जंगलों को काटना, अधिक मात्रा में टैक्स, ग्रामीण की भूमि पर पहुँच में कमी, पंचायतों की ताकतो में गिरावट आदि एकाधिकार के परिणाम हुऐ। इसके बावजूद पंचायतो का एक स्वतंत्र युग शुरू हुआ जो गॉधीयन अनुभव के तौर पर स्थानीय स्वतंत्र सरकार जिसे पंचायती राज कहा गया।

भू प्रबंधन सीधा दिल्ली से नियंत्रित होने लगा जिसके तहत जंगलो पर प्रतिबंध शुरू हो गया तथा पंचायती राज व्यवस्था का पुननिर्माण किया गया जिसमें सबसे छोटी इकाई ग्राम पंचायत कहलाई गई तथा गॉव के सामुदायिक संसाधन उसके तहत संचालित होने लगे। लेकिन जल्दी ही ये संस्थाऐ भ्रष्टाचार में लिप्त होने लगी तथा उनकी जवाबदेही व नियंत्रण असफल होने लगा।

KRAPAVIS

कृषि एवं पारिस्थितिकी विकास संस्थान (कृपाविस)

कृपाविस बणी, गांव-बख्तपुरा

पो० सिलीसेढ़, जिला अलवर-301001 (राज.)

ई-मेल:krapavis_oran@rediffmail.com

सम्पादन : अमनसिंह व प्रतिभा सिसोदिया

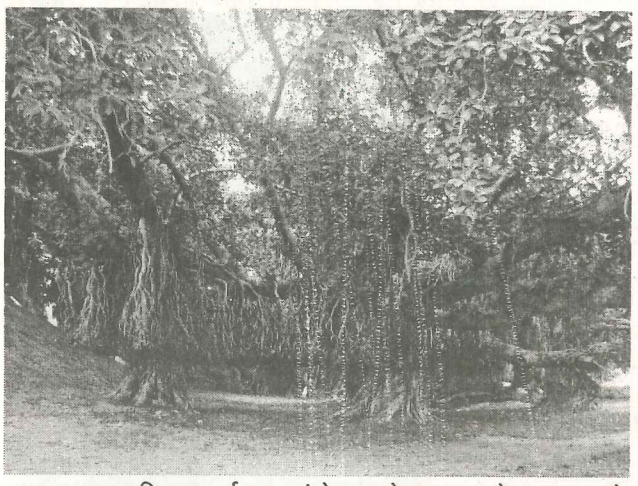

अलवर वन भूमि का सर्वप्रथम बंदोबस्त मेजर पाल ने कराया, जो सोलह साला बंदोबस्त को दो भागों में बनी व रूध मे बांटा। इसके बाद एम.एम. डायर ने पुनः बीस साला बंदोबस्त किया, जिसमें पूर्व की रूधं व बनी (ओरणों) को ही लेकर वन विभाग बनाया। सन् 1899 मे फोरेस्टर बाउंड्री कमीशन नियुक्त किया गया जिसकी रिर्पोट 31 मई 1911 को पूर्ण हुई। 1928 को वन विभाग ने इस जंगल का चार्ज लिया। रूंधो व बनियों के वन बंदोबस्त व रक्षित वन घोषित करने के लिए राजस्व मंत्री अलवर स्टेट ने जुलाई 1934 में अलवर असाधारण गजट का प्रकाशन किया। इसी दौरान फोरेस्ट रेगुलेशन को संशोधित किया गया।

1960 के प्रारम्भिक दशक में जंगलात विभाग गॉवों की बहुत सारी जमीन पर नियंत्रण करने लगा जिसके तहत तारबन्दी, दीवारबन्दी, पंचवर्षीय योजनाओं के तहत वृक्षारोपण जैसे कार्य शुरू हुये। इस प्रकार एक बार फिर सारी व्यवस्था केन्द्रीत हो गई जो जंगलात विभाग के हथियारमय गार्ड के रूप में विकसित है। वर्तमान में राजस्थान में जंगल बचाने की 2 व्यवस्थाएँ है– जंगलात विभाग द्वारा क्लोजर (दीवार – बन्दी) तथा दुसरी समुदाय द्वारा संचालित ओरण व्यवस्था। यद्यपि ये दोनों व्यवस्थाएँ प्रबंधन तथा जंगलो पर कानुन लागु करने की व्यवस्था है लेकिन क्लोजर व्यवस्था जिसमें अरबों – खरबों रूपया खर्च होने के बाद भी जंगल संरक्षण के अपेक्षित परिणाम नहीं आ रहे हैं वही दूसरी तरफ ओरण व्यवस्था जो समुदायों द्वारा सामाजिक–सांस्कृतिक अलिखित नियमों के तहत संचालित है तथा जिसमे बिना किसी खर्च के जंगल आठ शताब्दियों से बच रहा है।

गुर्जरवास की देवबणी, पशु पालन की धणी

गुर्जरवास की देवबणी राजस्थान के अलवर जिले की रामगढ तहसील के गुर्जरवास नाम ग्रम में स्थित है। इस गाँव की कुल जनसंख्या लगभग 965 है तथा कुल परिवारों की संख्या 95 है जो गुर्जर समाज के है । यहॉ के लोगो की आय का साधन मुख्य रूप से पशुपालन व कृषि है। यहाँ लोग परम्परागत तरीके से पशु पालते है।

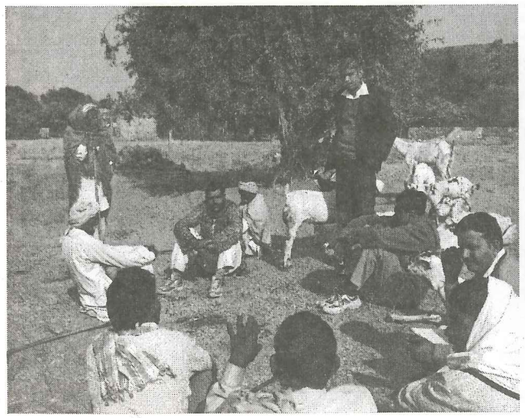

गुर्जरवास गॉव की देवबणी बहुत ही प्राचीन है इसको ''कैलाशपुरी की देवबणी '' या ''देवनारायण की देवबणी'' भी कहते है। ' 'देवनारायण ' गुर्जर समुदाय के इष्ट देव व सच्चे संरक्षक/धणी माने जाते है। इसीलिये तो आस–पास के 22 गॉवो के गुर्जर समाज ने मिलकर यहॉ पर देवनारायण का मन्दिर निर्माण कराया। गॉव के बुजुर्ग लोगो का मानना है कि यह बणी गुप्त संतो का निवास व तपो भूमि रही है। यह देवबणी गुर्जवास गॉव से ठीक पूर्व दिशा मे 2 कि०मी० पर स्थित है। भौगोलिक दृष्टि से देखा जाये तो यह जगह अरावली पर्वत माला मे स्थित है। इस देवबणी का क्षेत्रफल लगभग 400 बीघा है जिसमे वर्तमान मे राजस्व रिकार्ड के अनुसार 200 बीघा जमीन चारागाह श्रेणी मे दर्ज है।

इस देवबणी मे मुख्यतया 'पीलू'(सालवेडोरा ओलीओइडीज) के वृक्ष पाये जाते है। पीलू एक देशज, सदाबहार, सजातीय घने समूहो मे पाये जाने वाले छोटा (5मीटर उॅचाई, 3 मीटर गोलाई) आकार का सुन्दर वृक्ष है। इस की जडे गहरी होती है और अगल–बगल मे भी फैलती है। बीज गोल 3 मि०मि० व्यास, पीलाभ हरित तथा चिकने होते है। इसके फल खाये जाते है। मीठे गूदे मे ग्लूकोज व फ्रक्टोज शर्करा होती है। इसके अलावा अन्य पेड–पौधो मे छोकड़ा, कीकर, कैर, खैरी, पापड़ी जाल, चापैण, गुलर, विलपत्र , नींबू, अण्डोला, पीपल तथा नीम पाये जाते है। इस देवबणी मे कैर, खेजड़ा, कीकर पापड़, बर्बरा, ढाक, आक, धतुरा, अनेक प्रकार की जडी –बूटियॉ पाई जाती है जिनका संत महात्मा दवा के रूप मे प्रयोग कर रहे है और ग्रामीणो व पशुओं के उपचार हेतु उपयोग मे लेते है।

पक्षियों को चुग्गा डालने तथा चीटियां को आहार डालने की प्रथा भी है। लगभग 4–5 बजे महात्मा जी पक्षियों को चुग्गा डालते है वहॉ के पक्षि कतार मे आकर चुग्गा चुगते है। चुग्गे के लिए साल भर का पर्याप्त अनाज उपलब्ध रहे इस हेतु सावड/ शक प्रथा प्रचलित है। जो किसान अपने गेहूँ के ढेर मे से जो शक/ सावड अनाज के रूप मे निकालते है उस अनाज को बणी के भण्डार मे पहुँचाते है। यहॉ पर मीठी बोली वाले कोयल, मोर, पपीहा हमेशा गुंजन करते रहते है। इस वजह से यहॉ का वातावरण बहुत ही रमणीक है। भयानक अकाल मे भी यहॉ के पेड–पौधो मे शीतलता और हरियाली छायी हुई रहती है। इस देवबणी में पाये जाने वाले वन्य प्राणियों में रोजडी, जरख, सियार, गादडा, मोर, कबूतर, तीतर, तोता, उल्लू, चिड़िया, कोयल, हरियल, गिलहरी, नीलगाय, सर्प, गोहरा, बिच्छु आदि पाये जाते हैं।

गुर्जरवास गॉव मे ज्यादातर लोग बकरी, भैस व गाय पालते है। गॉव मे पशुधन मे लगभग 150 गाये, 1000 भैंसे, 5000 बकरियॉ– भेड़ व 50 ऊँट आदि पशु है जो पूरी तरह से चराई तथा पीने के लिये पानी हेतु इस देवबणी पर निर्भर है।

इस देवबणी मे पशुओ के चरने के लिये विभिन्न तरह के घास जैसे– झाड़ बेरी, मोथा, कोलीकांदा, लपाला, कुरी, धामन, अंजन, बर्बटा, बरू, कॉस (पुला) सांवा, मकडा, दुब, सुरवाल, तथा अन्य मौसमी घास पाये जाते है। देवबणी के मुख्य वृक्ष पीलू के फल खिलाने से पशुओ का दुध बढ़ता है। लेकिन पिछले एक दशक में इस देवबणी मे घासों की प्रजातियों का ह्रास तथा घास पैदावार मे काफी कमी आई है। जिसके कई कारण माने जाते हैं जैसे– बकरियों की संख्या मे तेजी से बढोतरी, अनियंत्रित व अत्याधिक चराई, बरसात की कमी, पशुपालन पद्वति मे परिवर्तन व देवबणी के मलकियत व अधिकार आदि। अत: 'कृषि एवं पारिस्थितिकी विकास संस्थान' (कृपाविस/कृपा संस्था) बख्तपुरा, ने देवबणी के साधू श्री राघव मुनी, श्री प्रकाश मुनी व श्री त्यागी जी तथा जागरूक समुदायों व ज्ञानवान लौगो को साथ लेकर इस देवबणी के पुनरोत्थान हेतु निम्न कार्य किये है:–

- देवबणी के अन्दर फल तथा छायादार पेड़–पौधे लगाये
- घासों के बीज छिटकवाए
- इस देवबणी के जल स्त्रोतों साधनो मे कुऐ, जोहड़ो के पूनरूत्थान व गहरीकरण

- मिट्टी के टक तथा पाल आदि का निर्माण कराया
- मिट्टी के कटाव व नमी रोकने हेतु छोटे 'टक' चैकडेम का निर्माण कराया

- पशुओ व वन्य प्राणियों हेतु जल संग्रहण वास्ते खैली निर्माण
- मैस की उन्नत नस्ल के लिये उन्नत नस्ल का भैसा सांड उपलब्ध करवाया ताकि उन्नत नस्ल की भैस ज्यादा दुध दे।
- वहॉ के लौगो को देवबाणी की रक्षा, प्रबंधन, आदि के सम्बन्ध मे जागरूक तथा उन्हे प्रेरित करने के प्रशिक्षण व बैठके आयोजित की।

पशुपालन का आश्रय: बजरंग देवबणी

''बजरग देवबणी'' राजस्थान के जयपुर जिले की दूदू तहसील के गाँव रामपुरा भुरयिया में स्थित है। यह देवबणी तहसील मुख्यालय से 5 कि.मी. दूरी पर स्थित है। इस गाँव की बसावट एक लम्बे कतार मे बसी हुई है। इस गाँव मे 145 परिवार निवास करते है जिसमें जाट, राजपुत, बागरीया, ब्रहामण, रेगर, बलाई, सैन तथा खाती आदि है। यहाँ के लोगो का जीवन यापन का मुख्य साधन पशुपालन, खेती और मजदुरी है। इस गावँ के पशुधन मे भैंस, गाय, बकरी, भेड, ऊँट आदि पशु मुख्य है। इस गाँव में 15 परिवार बागरीया समुदाय के भी निवास करते है। इन परिवारों की आजिविका का मुख्य साधन जुलीफलोरा पेड़ है। जिससे वे कोयला बनाकर बेचते हैं। कोयला इनकी आजिविका बन चुकी है। यहाँ तक देखने मे मिला की सपरिवार सहित अन्य जगह जाकर कोयला बनाकर बेचने के कार्य करते है। इस तरह यह इस समुदाय की आजिविका का एक नया साधन निकलकर आया है।

इस बजरंग देवबणी के आस–पास मे बापू वाले 5 गाँव पडतें है। जिनमे धमाणा, मोजमाबाद, देदू, रामपुरा, तथा भुरयिया आदि गाँव पडतें है। इस बजरंग देवबणी का क्षेत्रफल 100 बीघा है तथा राजस्व रिकार्ड मे चारागाह के नाम से दर्ज है। इस गाँव का अन्य गाँवो की बजाय पानी मीठा है तथा मिट्ठी भी बगरू जैसी है अर्थात अच्छी किस्म की जमीन यहाँ पर है। यहाँ के लोगो के पास अधिक भैंस उपलब्ध है। ये लोग दुध बेचकर अपना काम चलाते है। यहाँ क लघु किसानों के पास भेड़, बकरियों की पर्याप्त मात्रा है जिनसे वे अपना जीवन यापन करते है तथा बडे किसान 5–10 भैंस रखते है जिससे वो सपरिवार अपना यापन करते है। इस गाँव मे लोग पशुपालन मे व्यस्त रहते है जिससे इन लौगो का इस गाँव से पलायन कम ही हो पाता है।

आज से 50 साल पूर्व इस गाँव में चारा पानी की उपलब्धता अच्छी थी तथा चारागाहों में चारा पेड़–पौधें भी अच्छे थे अर्थात पानी व चारे का कोई अकाल नही था और न ही चारागाह पर अतिक्रमण था। 5 सालों मे चारागाह में से 300 बीघा पर लौगो ने अतिक्रमण करके फसल लेना शुरू किया। अतिक्रमण होने से लोगो को अपने पशुओं को चराने की व्यवस्था बिगडती दिखी तो लौगो के मन में विचार आया कि पशुओं को चारा नहीं मिलेगा तथा चारे की समस्या और अधिक उत्पन्न हो जायेगी। तो जिन लोगो ने अतिक्रमण नहीं कर रखा था उन लोगो ने एकत्रित होकर संगठन बनाया और अतिक्रमण करने वाले लौगो को गाँव के स्तर पर समझाने का पुरा प्रयास किया लेकिन यह प्रयास उनका असफल रहा फिर लोगो ने परेशान होकर प्रशासन का सहयोग लेकर अतिक्रमणकारियों से चारागाह को मुक्त करवाया। उसके बाद लौगो ने अफसर को देखकर वापस अतिक्रमण जमा लिया फिर गाँव वालो ने राज्य स्तर व जिला स्तर पर प्रशासन का सहयोग लेकर अतिक्रमण को हटाया।

बदलती परिस्थितियों ने गाँव वालो को चेताया तथा उन्होने उसी क्षेत्र मे कार्य कर रही स्वंय सेवी सस्था –''महिला एवं पर्यावरण विकास संस्थान '' मौजमाबाद कों गाँव की लगभग 20 साल पूर्व व वर्तमान परिस्थितियों से अवगत कराया और बदलते हालात के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की। गाँव की इस पहल और परिस्थिति को समझकर संस्था ने गाँव में 50 हेक्टेयर भूमि चारागाह मे चारा की समस्या को पुरी करने के लिए 10 बीघा मे घामण घास लगाया तथा विभिन्न किस्म के पौधें शहतूत, नीम, बोरड़ी, शीशम, बबूल, पीपल, वट वृक्ष, खेजडी, देशी बबूल, आदि के पौधे लगाये। इस चारागाह कार्य के प्रति लौगो में आत्म विश्वास प्रकट हुआ तथा चारागाह विकास पर लोगो का ध्यान आकर्षित हुआ। संस्था ने चारागाह के मेडबन्दी व पशु पेयजल के लिए एक नाडी का निमार्ण भी किया जो जानवारों व पशुओं के लियें उपयोगी हुई। इस कार्य को देखकर लोगो मे जागरूकता पैदा हो गई तथा लोग चारागाह के प्रति संगठित होने का विचार विमर्श करने लगें। जो आज चारागाह में पशुओं को न चराने का निर्णय लिया गया।

(सर्वेकर्त्ता:रामचन्द्र सैनी)

अनुसूचित जनजाति और अन्य पारंपरिक वनवासियों के वन अधिकारो का कानून

वन एवं वन उतपादों पर वनवासियों के परंपरागत अधिकारों को मान्यता देने संबंधी विधेयक ''अनुसूचित जनजाति और परम्परागत वन निवासी'' (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 (2007 का 2) को कानून के रूप में 31 दिसम्बर 2007 को अधिसूचित किया गया। केन्द्रीय सरकार अनुसूचित जनजाति और अन्य परम्परागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, 2006 (2007 का 2) की धारा 14 की उपधारा (1) और उपधारा (2) द्वारा प्रद्वत शक्तियों का प्रयोग करते हुए, वन में निवास करने वाली अनुसूचित जनजातियों और ऐसे वनो में निवास करने वाले अन्य परम्परागत वन निवासियों के वन अधिकारों और वन भूमि पर अधिभोग को मान्यता देने और उसमें निहित करने के लिए नियम बनाऐ है। इन नियमों का सक्षिप्त नाम अनुसूचित जनजाति और अन्य परम्परागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) 2007 है।

ग्राम पंचायत द्वारा ग्राम सभाओं का संयोजन किया जायेगा। और उसके पहले अधिवेशन में वह अपने सदस्यों में से कम से कम 10 किन्तु 15 से अधिक व्यक्यिों को वन अधिकार समिति के सदस्यों के रूप में निर्वाचित करेगी जिसमें कम से कम एक तिहाई सदस्य अनुसूचित जनजातियों के होगे। परन्तु ऐसे सदस्यों में से कम से कम एक तिहाई सदस्य महिलाऐ होगी। परन्तु यह और की जहाँ कोई अनुसूचित जनजातियाँ नही है वहा ऐसे सदस्य में से कम से कम एक तिहाई सदस्य महिलाऐ होगी। वन अधिकार

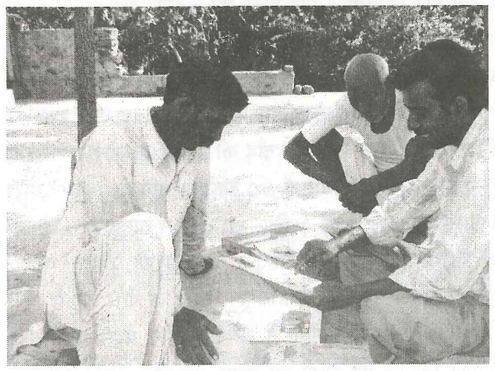

अध्यक्ष और सचिव का विनिश्चय करेगी और उसकी सूचना उपखंड स्तर की समिति को देगी।

वन अधिकारों की प्रकृति और सीमा का अवधारण करने के लिए कार्यवाही आरम्भ करेगी। और उससे सबंधित दावों की सुनवाई करेगी। वन अधिकारों की मान्यता और उनके निहित होने की प्रक्रिया की निगरानी के लिए मानदंड और संकेतक तय करेगी। दावों और साक्ष्य का, मानचित्र सहित, अभिलेख तैयार करना, वन अधिकारों के संबंध में दावेदारों की सूची तैयार करना। प्राप्त किए गये प्रत्येक दावें की वनाधिकार समिति द्वारा लिखित में सम्यक् रूप से अभिस्वीकृति की जाएगी। ग्राम पंचायत का सचिव अपने कृत्यों के निर्वहन में ग्राम सभाओं के सचिव के रूप में भी कार्य करेगा।

ग्राम सभा उपखंड स्तर समिति, और जिला समिति, वन अधिकारों का अवधारण करने में में उपर उल्लखित एक से अधिक साक्ष्यों पर विचार करेगी। उपखंड स्तर समितियाँ तो याचिका को मंजूर या नामंजूर करेगी या उसे संबंधित ग्राम सभा को उसके विचार के लिए निर्दिष्ट करेगी। जिला स्तर समिति या तो याचिका को मंजूर या ना मंजूर करेगी या उसे संबंधित उपखंड स्तर समिति को उसके विचार के लिए निर्दिष्ट करेंगी।

(स्त्रोत अधिसूचना, भारत सरकार, जनजातीय कार्य मंत्रायल, नई दिल्ली 01–01–2008)

पशु स्वास्थ ग्राम्य स्तरीय कार्यकर्त्ता प्रशिक्षण

कृपा संस्था/कृपाविस लगभग प्रतिवर्ष एक माह अवधि का पशु स्वास्थ ग्राम्य स्तरीय कार्यकर्त्ता प्रशिक्षण का आयोजन करता है। इस वर्ष यह सत्र जुलाई में शुरू होगा। इच्छुक युवा कृपाविस से सम्पर्क कर सकते है। इस प्रशिक्षण में विभिन्न बिन्दुओं जैसे– टीकाकरण, पशु स्वास्थ, पशुपालन विकास हेतु चाहागाह विशेषकर ओरण देवबणियों के प्रबंधन व संरक्षण हेतु ग्रामीणों को सहयोग पशुओं को स्वच्छ जल हेतु खेली–कुआँ निर्माण पशु नस्ल सुधार, प्रबंधन तथा उन्नत विधियों द्वारा, समस्या एवं समाधान, पशु खान–पान, रहन–सहन आदि का कार्य क्षमता बढाना है।

मवेशी माइग्रेशन (प्लायन) और ओरण/देवबणियां

जब मनुष्य, मवेशी व पशु–पक्षियों की आवश्यक्ता की पूर्ति उन के मुख्य स्थान या गांव में नही होती तो वे दुसरे स्थानो के लिये निकले जाते हैं। जहाँ उनकी आवश्यकता की पूर्ति हो सकें वहाँ पर कुछ समय के लियें माइग्रेट कर जातें हैं और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर जीवन यापन करतें है। विशेषकर राजस्थान में बरसात कम होने के कारण रेगिस्तानी इलाकें बाडमेंर, जैसलमेंर, जोधपुर, नागौर आदि क्षेत्रों से माइग्रेशन होता है। जिसका मुख्य कारण पानी तथा चारे की कमी होती है। माइग्रेट अधिकतर पशुपालक ही करतें है जिसमें अधिकतर गुर्जर व रेबारी जाति के पशुपालक होते हैं। राजस्थान प्रदेश का एक बहुत बडा हिस्सा किसी समय पेडों से आच्छादित रहता था किन्तु पिछले 30–40 सालो से विभिन्न आवश्यक्ताओं की पूर्ति हेतु वनो का बहुत विनाश हुआ है। जिसके कारण ओरण/देवबणियों का काफी ह्रास हुआ है। उधर बरसात कम होने लगी तथा पिछले कुछ सालो से अकाल की स्थिति पैदा हो गयी और इसका सामना करने के लिये पशुपालक अपने पशुओं को लेकर माइग्रेट करने लगे पिछले 15–20 सालो से माइग्रेशन अधिक होने लगा। आवश्यक्ताओं की पूर्ति हेतु पशुपालक 600–700 कि.मी. तक की पशुओ के साथ पद यात्रा करतें है। जिसमें अधिकतर छोटे पशु भेड़–बकरी होते है। ये लोग बडी नदियों किनारे जैसे यमुना, गंगा के किनारे पानी की नमी के कारण पैदा हुई घास को चराते है। प्रदेश का दूसरा हिस्सा पहाडी है जिसमें अलवर, भरतपुर, जयपुर, अजमेर, उदयपुर, डुगरपुर यहाँ की गुर्जर जाती के लोग अधिकतर बडे पशु पालतें है जैसें:– गाय, भैंस, ऊट, आदि।

राजस्थान मे माइग्रेशन निम्न दो प्रकार से होता है:– 1 अस्थाई माईग्रेशन, 2 लम्बे समय व अधिक दूरी का माईग्रेशन। अस्थाई माईग्रेशन, अधिकतर पहाडी क्षेत्रों में होता है। जिसमें अलवर, भरतपुर, जयपुर, अजमेर, उदयपुर, डुगरपुर आदि जिले आतें है। पहाडी क्षेत्रों में बसने वाले पशुपालक अधिकतर गुर्जर जाति के व रेबारी जाति के होते है। ये लोग अधिकतर बडे पशु गाय, भैंस, ऊट, बैल आदि पालतें है। चारे पानी की कमी को देखते हुये उनको अपने पशुओं का पेट भरना मुश्किल हो जाता है और बारिश हो जाने पर पहाड़ो के ऊपर समतल जगहों पर घास व छोटे – छोटे नालों में जहाँ पहाड का पानी एकत्रित हो जाता है वे उस पानी को उपयोग में लाने के लिये और अपने आवश्यक्ताओं की पुर्ती के लिये अपने पशुओं को पहाडो के ऊपर ले जाते है। ऐसे स्थान पहाडो मे बणी– देवबणीयों मे ज्यादातर मिलतें है जहाँ पर पशुपालक को रूकने का स्थान भी मिल जाता है। इस प्रकार साल मे 5 माह स्थाई माइग्रेशन रखते है और पहाड़ पर ही रहते है। यह माइग्रेशन गाँवो से 4–5 कि. मी. कर दुरी पर ही होता है। इस का मुख्य कारण यह होता है कि पशुपालक अपने गाँव से पशुओं के लिये दाना, खल, चारा आदि पहुँचा सके और उनसे निकाला हुआ दुध सुबह व शाम आसानी से अपने ग्राम लाकर वहाँ से बाजार में पहुँचा कर पैसो की व्यवस्था कर सके। इस प्रकार से ऊपर जब पानी व चारा खत्म होने लगता है तो सभी पशुपालक अपने पशुओं केा लेकर ग्राम में ही आ जाते है। इस तरह से 4–5 माह का समय बरसात मे निकाल लेते है।

लम्बे समय व अधिक दुरी का माईग्रेशन, यह माईग्रेशन अधिकतर रेगिस्तानी इलाको जैसे:जैसल्मेर, बाडमेर, नागौर तथा जोधपुर आदि जिलों मे होता है। इन क्षेत्रों के पशुपालक अधिकतर अपने छोटे पशुओं का जैसे– भेड़,व बकरी को साथ लेकर चारे तथा पानी की तलाश मे जिनके साथ कुछ बडे पशु भी होते है जिनमे गाय, ऊँट, बैल, गधे आदि मुख्य है जो कि सामान ढोने के काम आते है को लेकर निकल पडते है आगे एक टोले में दो चार आदमी होते है जिनमे से दो आदमी आगे से शहरों गाँव में जाते रहते है जिसमे पशुओं को चराने के लिये चारे का स्थान व बाजार मे जाकर स्वयं के खाने–पीने के सामान का इन्तजाम आगे से आगे करते रहते हैं।

इनको बरसात कम होने के कारण सुखे का सामना करना पडता है और बरसात होने पर जहाँ भी पहाड़ो के ऊपर समतल जगहों पर जहाँ पर पानी व चारे की व्यवस्था होती है वही पर अपने पशुओं को ले जाते है। यह व्यवस्था अधिकतर देवबणियों में मिलती है। बरसात के समय घास भी पशुओं को मिल जाती हैं।

इस व्यवस्था मे कृषि एवं पारिस्थितिक विकास संस्थान (कृपाविस/कृपा संस्था) अलवर ने ओरण /देववाणियों में जगह–जगह पर चैकडेम, एनीकट, तालाब–जोहड़, पहाड़ों के ऊपर बनाकर पानी को रोका है ओर देवबणियों का विस्तार किया है। पेड़–पौधे लगाये तथा पानी की नमी बनाये रखने के लिये चैकडेम बनवाये। इस देवबणी की रक्षा या तो समाज के लोग करते हैं या फिर किसी देवी–देवता के नाम पर वहाँ के साधु महात्मा करते हैं जो कि वहाँ पर अपना स्थान बनाकर रहते हैं। धर्म व भगवान में आस्था रखने वाले पशुपालक साधु बाबाओं के पास जाकर भगवान की भक्ति के बारे में ज्ञान प्राप्त करने व देवस्थान पर पूजा करने आते रहते हैं। साधु–महात्मा इनका सहयोग लेकर बणी के क्षेत्र को विनाश से बचाये रखते हैं और इनका विकास करते रहते हैं।

यांत्रिक / आधुनिक व्यवस्था बनाम आदिवासी पारम्परिक व्यवस्था में मूल भेद

क्र. सं.	भेद के आधार	यांत्रिक / आधुनिक	आदिवासी /पारंपरिक
1.	पर्यावरण– प्रकृति से सम्बंध	प्राकृतिक सीमाओं की अवमानना करके जीने की प्रवृति, प्रकृति पर विजय करना प्रशंसनीय माना जाता है, प्रकृति का बदलाव वांछित माना जाता है। संसाधनो का दोहन समरसता के विरूद्व।	प्राकृतिक मर्यादाओं और परिवेश मे जीने का प्रोत्साहन, प्रकृति के साथ समरसता की मर्यादा, तत्काल रोटी, कपड़ा मकान के लिए फेर बदल को स्वीकृति, स्थाई हानि वर्जित।
		पर्यावरण को बदलने लिए अति प्रभावी योत्रिकी विशालकाय विकास शसत्रतकनीक एंव अन्य यांत्रिकी में करोडो–के–लिए –एक की कारगरता पर जोर। ''मानव सबसे श्रेष्ठ जीव'' की मान्यता पृथ्वी को मृत मानना	यांत्रिकी का प्रकृति पर अल्प प्रभाव शस्त्रों मे एक– के– लिए– एक की कारगरता। सारे विश्व को जीवित मानना, वनस्पति, पशु, मानव चट्टाने आदि मनुष्य सर्वोपरि नहीं, बल्कि जीवन तंत्र का बराबर हिस्सेदार, मानव का अतिरिक्त जीवों के साथ पारस्परिक लेनदेन का रिश्ता।
2.	अर्थ व्यवस्था	निजी सम्पति की मूल मान्यता, इसमें संसाधन, भूमि शामिल है जिन्हें खरीदा बेचा जा सकता हैं। कुछ मात्रा में राज का स्वामित्व अधिकतर निजी कम्पनियों की मालिकी।	भूमि, जल, खनन, एवं वनस्पति आदि निजी व्यवस्था सम्पति नहीं माने जाते, जमीने न बैची जाती हैं और न ही निजी विरासत में दी जाती है।
		वस्तु उत्पादन अधिकतर बेचने के लिए हैं निजी उपयोग के लिए नही।	उत्पादन निजी उपयोग हेतु।
3.	राजनीति और सत्ता	सीढी–नुमा राजव्यवस्था। प्रचलित राजनैतिक शैली साम्यवादी, समाजवादी, पुजींवादी फाशी अथवा राजा द्वारा।	साधारणतः ऊचँ– नीच से मुक्त व्यवस्था, मुखिया को दण्ड अधिकार नही। निर्णय सामान्यतः पूरे समूह की सर्व सम्मति द्वारा।
		निश्चित लिखित कानूनः जिरह की परस्पर विरोधी प्रक्रिया, मानव केन्द्रित कानून, अपरिचितो द्वारा अपराधों का फैसला (अमेरिका और यूरोप में) कानून के दायरे से कुछ भी बाहर वर्जित नहीं। राज्य की अवधारण प्रमुख।	अलिखित कानूनः, मौखिक प्रसार, कोई परस्पर विरोधी प्रक्रिया नहीं, कानून की व्याख्या हर मामले के अनुसारः प्राकृतिक कानून का आधार, अपराध का फैसला अपराधी के परिचित साथियों के समूह द्वारा, वर्जन हैं। राष्ट्र की अवधारणा प्रमुख है।
4.	सामाजिक सांस्कृतिक व्यवस्थाएं	विशालकाय समाज, अधिकतर घनी आबादी के क्षेत्र।	लघु समुदाय एके दुसरे से परिचित, आबादी का घनत्व कम।
		वंश प्रणाली पैतृक। दो या एक अभिभावक आधारित अनुपरिवार व्यक्ति अकेले भी रहते है।	सामान्यतः मातृवंशजता, कुछ संशोधन भी, परिवार की सम्पति का अधिकार, स्त्रियों के माध्यम से । विस्तृत परिवार, नई पीढ़ियॉ और परिवार साथ रहते है।
5.	वास्तुकला	निर्माण के पदार्थ दुर से लाए जाते है। निर्माण व्यक्ति से अधिक जीवनकाल की अवधि के लिए। रिहाइश का स्वरूप/ जगहों का प्रयोग एक दूसरे से अगल रहने व निजीपन की रक्षा के लिए।	निमार्ण स्थानिय पदार्थो से। निमार्ण पदार्थ का चयन और उपयोग धरती में क्षय होने की दृष्टि से पदार्थ का एक जीवनकाल में जैविक क्षय। जगह रिहाइश समूदायक गतिविध के लिए।
6.	धर्म और दर्शन	पश्चिमी संस्कृति में अधिकतर आधयात्म और शेष जीवन अलग माना जाता है (कुछ मुस्लिम हिन्दु या बुद्व राज्यों मे ऐसा नहीं है) राज्य और धर्म संस्था (चर्च) अलग पश्चिमी देशों मे भौतिकवाद मुख्य दर्शन है।	दैनिक जीवन का हर पहलू आध्यात्म युक्त माना जाता है। अनेक देवी देवता जो प्रकृति प्रदत जैविकता से जुडे है। भूत एवं भविष्य का सामंजस्य। व्यक्ति अपने अनुभव से सूचना प्राप्त करते है।

Source- IN THE ABSENCE OF THE SACRED- "The Failure of Technology and the Survival of the Indian Nations" by Jerry Mander, Sierra Club Books 1992, p.215-19, Translated by Shri Kishore Saint.

वन विभाग के नियंत्रण में भौमिया बाबा की देवबणी गुल्लाना (दौसा) की दांस्ता

भौमिया बाबा की देवबणी राजस्थान की दौसा जिले की बसवा तहसील के गुल्लाना नामक गांव में स्थित है। इस गांव का कुल क्षेत्रफल 1000 हैक्टेयर है। इस गांव की कुल जनसंख्या लगभग 6000 तथा कुल परिवारो की संख्या लगभग 600 है जिनमें लगभग 200 परिवार अनुसूचित जाति के हैं, 250 परिवार अनुसूचित जनजाति के, 100 परिवार पिछडी जाति के तथा 50 परिवार सामान्य जाति के हैं। यहां के लोगो का आय का साधन मुख्य रूप से कृषि, पशुपालन व मजदूरी हैं। इस गांव में कुल खेती योग्य भूमि 600 बीघा हैं। इस गांव की चारागाह भूमि 500 बीघा हैं तथा बंजर भूमि 200 बीघा हैं। इस गांव में एक प्राचीन देवबणी भी विद्धमान हैं, जिसको भौमिया बाबा की देवबणी के नाम से जाना जाता हैं। भैमिया बाबा की देवबणी गांव के बुजुर्गों लोगो के अनुसार लगभग 1020 साल पुरानी हैं। इस देवबणी का कुल क्षेत्रफल लगभग 15 बीघा हैं जिसकी खातेदारी वन विभाग के पास हैं। वन विभाग ही इस देवबणी की रक्षा करता हैं।

इस देवबणी में विद्वमान वर्तमान में वृक्षो की प्रजातियों में पीपल के 5 पेड, देशी बबूल के 200, हिंगोट के 20, नीम के 10, विलायती बबूल के 50, अडूस्टा के 100, पापड के 10, बेर झाडी के 100, आदि प्रकार के वृक्षो की प्रजातिया पायी जाती हैं इनका उपयोग जयादातर जैसे पीपल, देशी बबूल, विलायती बबूल, झाडी, हिंगोट, नीम आदि का पशुओं चारा चराने के रूप में बेर झाडी का फल के रूप में तथा अडुस्टा के पत्तों को औषधी आदि के रूप मे उपयोग लिया जाता हैं। जिनमे वर्तमान मे पीपल व हिंगोट की संख्या घट रही है बाकि सभी पेडो की संख्या बढ रही है। इस देवबणी क्षेत्र मे वर्तमान मे विद्वयवान वृक्षो की कुल संख्या लगभग 500 है। इस देवबणी कुछ प्रजातिया तो ऐसी है जो कि आज से 15–20 साल पहले विलुप्त हो गयी जिनमे गुलर की प्रजाती 10 साल पहले संरक्षण के अभाव मे तथा विल्वपत्र की प्रजाति 5 साल पहले पानी के अभाव मे समाप्त हो गयी है।

इस देवबणी के पारिस्थितिकी क्षेत्र मे अत्यधिक चराई के कारण देवबणी का क्षरण हो रहा है तथा पशु– पक्षी पानी के अभाव में इस देवबणी से प्लायन कर रहे है। इस देवबणी के पेड़–पौधो पर आधारित उद्योग धन्धो में पशुपालन मुख्य रूप से निर्भर है इस देवबणी के जल स्रोत के साधनों में एक परम्परागत खैल है जिसके पानी को उपयोग मे लेने के रूप मे एक टांके के निर्माण का अभाव है। इस देवबणी के जल स्रोत के पानी का उपयोग पशु –पक्षियों के पानी पीने व पेड–पोधों को पानी देने के काम आता हैं।

इस देवबणी मे प्रत्येक साल जेठ बदी छठ को मेले का आयोजन किया जाता है जिसमे दंगल, कुश्ती, नाटक, आदि का आयोजन किया जाता हैं। ग्राचीन काल मे यह देवबणी काफी विकसित थी लेकिन संरक्षण व पानी के उपयोग के अभाव मे यह देवबणी वर्तमान मे क्षरण हो रही है। वर्तमान मे ग्रामीणों ने इस देवबणी के चारों और चारदीवारी करने की पहल कर रखी है लेकिन आर्थिक परेशानियों के कारण यह कार्य पूरा नही हो पाया है।

इस देवबणी मे पाये जाने वाले पशुओं मे बकरी400, भेड100, गाय50, भैंस 150, आदि देशी व कृत्रिम नस्ल के पशु पाये जाते है। इनका देवबणी मे सबसे अधिक चारण होने के कारण देवबणी का क्षरण हो रहा है। इस देवबणी मे करीब 700 पशु चरने आते हैं। इस देवबणी मे पाये जाने वाले वन्य प्राणियों मे सियार30 , अजगर 2, नीलगाय 50, बघेरा 2, खरगोश 15, तथा तीतर 20, आदि कई प्रकार के कुल लगभग 150 वन्य प्राणी पाये जाते है। जिनमे वर्तमान मे सियार और अजगर की संख्या घट रही है जिनका मानव समुदाय के प्रति नकारात्मक प्रभाव है तथा नीलगाय खरगोश, तीतर आदि की संख्या बढ रही है इनके प्रति मानव

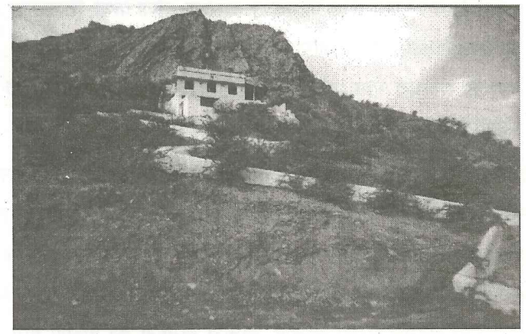

समुदाय की सोच सकारात्मक हैं। बघेरे वर्तमान मे नही घट रहे है न ही बढ रहै है। इस देवबणी मे शेर, जंगली सूअर, हिरण, आदि जानवर जल के अभाव व मानव की उनके प्रति नकारात्मक सोच के कारण वर्तमान में इस देवबणी से विलुप्त हो रहे हैं। ये प्राणी इस दस देवबणी मे आज से 20–25 साल पहले पाये जाते थे। उपरोक्त सभी जानकारी वहां के एक ज्ञानवान बुर्जुग लौगो के द्वारा दी गई जिनमे मुख्य रूप से श्री कालूराम मीणा, –किसान एंव समाज सेवक, श्री घनश्याम मीना – आध्यात्मिक व्यक्ति, श्री भगवान सहाय शर्मा– मन्दिर पुजारी, श्री सूखपाल मीना–पुर्व सरपंच, श्री धनपाल मीना–किसान, श्री देवी सहाय शर्मा– सेवानिर्वत अध्यापक, श्री मुरारी लाल शर्मा – वैघ आदि लोगो ने दी।

इस देवबणी के संरक्षण के लिए आवश्यक है कि पेड–पोधे, पशु–पक्षियों, वन्य प्राणियों के लिए जल की समुचित व्यवस्था करना तथा लोगो में इनके संरक्षण के प्रति जागृति पैदा करना है। पालतु पशुओं के संबंघ में देवबणी में पशुओ द्वारा अनियंत्रित चराई को ग्रामवासियों द्वारा नियंत्रित करना। तभी इस देवबणी का पुनः विकास तथा संरक्षण हो सकेगा।

(सर्वकर्त्ता:युदुनाथ धर्मा)

पश्चिमी राजस्थान के ओरणों पर शोध-यात्रा सम्पन्न

कृषि एवं पारिस्थितिकी विकास संस्थान (कृपाविस /कृपा संस्था) अलवर द्वारा पश्चिमी राजस्थान के जिलों के ओरणों पर शोध यात्रा 21 दिसम्बर 2007 से 1 जनवरी 2008 तक आयोजित की गई । इस शोध यात्रा को आयोजित करने का मुख्य प्रायोजन ओरण/देवबणियों का सर्वे करना तथा इस मुददे पर जनचेतना बढाना हैं। सर्वे टीम द्वारा निर्धारित सर्व फार्मेट मे सम्पूर्ण जानकारी एकत्रित की गई । ओरण की वर्तमान स्थिति , मलकीयत, उघोग, प्राचीन स्थिति, कुल क्षेत्रफल, वनस्पति आच्छादित एवं अनाच्छादित क्षेत्रफल चारागाह भुमि, बंजर भूमि, जल स्रोत, जैव विविघता आदि के बारे मे उस गांव के ज्ञानवान लोगो से जानकारी ली गई । सांस्कृतिक तथ्यों की जानकारी के तहत उस देवबणी से संबधित लोक जानकारी, कहावत, लोक कथा, शिलालेख, ग्रन्थ, हस्तलिखित, लिपि, जागा आदि द्वारा दस्तावेज, धार्मिक भणत, ओरण से संबधित गीत, दोहा, छन्द, ऐतिहासिक पहलू, सामाजिक सांस्कृतिक पहलू, आदि तथ्यों के बारे मे जाना।

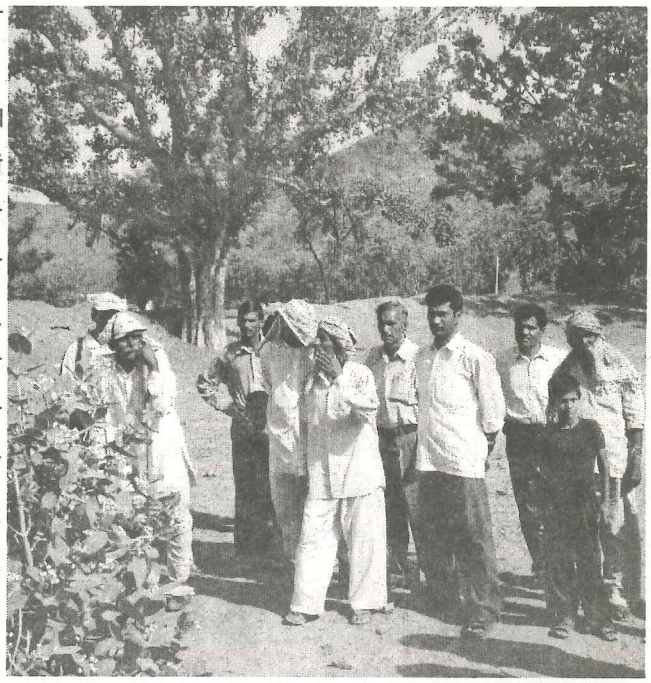

शोध यात्रा के दौरान विभिन्न जिलो के ओरणों जिनमें मुख्यतया देवनाराण की बणी भगवानपुरा जिला अजमेर, चावण्ड माता की बणी ग्राम हम्मीरगढ़ जिला भीलवाडा , नारसिंह माता की बणी बोरोदा जिला चित्तौड़, देवनारायण की बणी ग्राम मांदलदा जिला चित्तौढ़, माताजी की देवबणी ग्राम साकरोदा जिला उदयपुर, सोमेश्वर महादेव की बणी ग्राम घासड़ा जिला उदयपुर, चाक सोन्ड माताजी की बणी ग्राम मुगंथला जिला सिरोही, बुद्धेश्वर महादेव की बणी ग्राम बासन जिला सिरोही, जम्मेश्वर महादेव की बणी ग्राम सांचोर जिला जालौर, माताजी का ओरण ग्राम सरनउें जिला जालौर, बाकल माताजी का ओरण ग्राम सरनउें जिला जालौर, रामदेव जी का ओरण ग्राम लासडी जिला सिरोही, आलम बाबा का ओरण ग्राम भोर जिला बाड़मेर, रामदेव जी बणी ग्राम सनावडा जिला बाड़मेर आसपुरा देवी की बणी ग्राम देवी कोट जिला जैसलमेर आलम जी का ओरण ग्राम मुलसागर जिला जैसलमेर, भैमिया जी का ओरण ग्राम दामोदरा जिला जैसलमेर, जोगमाया का ओरण ग्राम सोड़ाकोर जिला जैसलमेर, आदि गावों का सर्वे व जन चेतना कार्य किया गया। शौध-यात्रा के दौरान विभिन्न जिलों की स्वंसेवी व अकादमिक संस्थाओं, वैज्ञानिकों, सामाजिक व राजैनतिक कार्यकर्ता के साथ भी मिलकर जानकारी एकत्रित की गई। इससे पूर्व राजस्थान के पूर्वी व मध्य जिलों के ओरणो पर शोध-यात्राओं की जा चूकी हैं।

कृषि एवं पारिस्थितिकी विकास संस्थान (कृपाविस), बख्तपुरा, अलवर (राज०) द्वारा जनहित में प्रसारित।
इस पत्रिका के लिए सहयोग 'विश्व संघ विकास कार्यक्रम ' तथा 'पर्यावरण शिक्षण केन्द्र' से प्राप्त।
मुद्रक: जय बाबा प्रिन्टर्स, स्टेशन रोड़, अलवर। मो. 9414893348. लेआउट सहायक : पवन कुमार शर्मा